*बैंकिंग विनियामकीय शक्तियां स्वामित्व निरपेक्ष होनी चाहिए**

उर्जित आर.पटेल

मैं आज बैंकों, विशेषत: सरकारी क्षेत्र के बैंकों (पीएसबी) के विनियमन में मौजूद कुछ मूलभूत दरारों पर प्रकाश डालना चाहूंगा। बैंकिंग क्षेत्र में नई धोखाधड़ी की खबर आए अब एक महीने से ऊपर हो चला है।

सफलता का श्रेय अनेक लोग लेते हैं, असफलता का कोई नहीं होता। इसलिए, इस मामले में भी हमेशा की तरह आरोप लगाए गए, दोष मढ़े गए और बहुत शोर-शराबा हुआ, जिसमें अधिकतर बिना सोचे समझे तुरंत दी गई अल्पकालिक प्रतिक्रियाएं थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि इस कोलाहल ने सहभागियों को ऐसे मूलभूत मुद्दों पर गहराई से विचार करने और आत्म-परीक्षण करने से रोका जो बैंकिंग क्षेत्र में ऐसी धोखाधड़ियों और उससे जुड़ी अनियमितताओं के मूल कारण हैं, जो कि वास्तव में अत्यंत नियमित हैं, जैसा कि मैं आगे स्पष्ट करूंगा।

आइए, मैं उस मुद्दे से शुरूआत करता हूं, जो कुछ तात्कालिक प्रतिक्रियाओं का केंद्र बिंदु रहा है - रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों का पर्यवेक्षण।

आईएमएफ/वर्ल्ड बैंक एफएसएपी मूल्यांकन

इस घटना से पहले संचालित, पूर्ण और प्रकाशित किए गए अपने 2017 भारत के वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन कार्यक्रम (एफएसएपी) में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) तथा विश्व बैंक (डब्ल्यूबी) ने निम्नलिखित टिप्पणियां की हैं:

1. सार्वजनिक रूप से प्रकाशित एफएसएसए (वित्तीय प्रणाली स्थिरता मूल्यांकन) रिपोर्ट, पैरा 35, पृष्ठ 17 : *आरबीआई ने बैंकिंग पर्यवेक्षण को सुदृढ़ बनाने में काफी प्रगति की है: एक प्रमुख उपलब्धि है वर्ष 2013 में जोखिम और पूंजी के मूल्यांकन हेतु पर्यवेक्षी कार्यक्रम (स्पार्क) के रूप में एक व्यापक और प्रगतिशील जोखिम- आधारित पर्यवेक्षण की शुरुआत करना। बासल III ढांचा तथा वृहत् एक्सपोजरों पर अधिक कठोर विनियमों सहित अन्य अंतरराष्ट्रीय दिशानिर्देशों का कार्यान्वयन किया गया, या चरणबद्ध रूप से किया जा रहा है। घरेलू तथा सीमा पार सहयोग की व्यवस्थाओं को अब सुदृढ़ बनाया गया है। 2015 में एक्यूआर (आस्ति गुणवत्ता समीक्षा) तथा विनियमों को मजबूत बनाए जाने से दबावग्रस्त आस्तियों की पहचान में सुधार आया है। अप्रैल 2017 में आरबीआई ने एक नया प्रवर्तन विभाग स्थापित किया है तथा अधिक विवेकपूर्ण जोखिम सहनीय सीमाओं को शामिल करने के लिए अपने त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई (पीसीए) ढांचे को संशोधित किया है।*

2. इसके अतिरिक्त, अन्य विनियमों, लेखांकन और प्रकटीकरण (मुख्य सिद्धान्त या सीपी 20, 26-29: पैरा 60, पृष्ठ 21) पर विनिर्दिष्ट टिप्पणियों में : *आरबीआई द्वारा जारी आंतरिक नियंत्रण विनयम पर्याप्त हैं और स्पार्क जोखिम आधारित पर्यवेक्षण प्रणाली द्वारा समर्थित हैं। इस प्रणाली में आंतरिक नियंत्रण और लेखा-परीक्षा कार्य के निरीक्षण के लिए विस्तृत दिशानिर्देश दिए गए हैं तथा यह निर्धारण किया गया है कि किसी बैंक के आंतरिक नियंत्रणों में जोखिमों की पहचान और नियंत्रण अनुमत होंगे। बैंकों में आंतरिक लेखापरीक्षा विभागों के पास उचित संसाधन तथा आवश्यक कुशलता वाले कर्मचारी होना अपेक्षित है। अतिरिक्त विशेषज्ञता को लाने के लिए कार्यों को आउटसोर्स किया जा सकता है। लेखापरीक्षकों ने रिपोर्ट किया है कि बैंकों की आंतरिक लेखापरीक्षा की गुणवत्ता का समग्र अनुभव संतोषजनक रहा है।*

तथापि, भारत के लिए एफएसएपी में अनेक स्थनों पर इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि बैंकों पर रिज़र्व बैंक की विनियामकीय शक्तियां बैंक के स्वामित्व के प्रति तटस्थ नहीं हैं:

1. प्रभावी बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासल के मुख्य सिद्धान्त (बीसीपी) पर विस्तृत मूल्यांकन रिपोर्ट (डीएआर), पैरा 6, पृष्ठ 7 में : *आरबीआई की स्वतंत्रता के संबंध में पहले पाई गई कुछ कमियां तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों का पर्यवेक्षण करते समय अंतर्निहित हितों का टकराव बना हुआ है। आरबीआई के पास काफी हद तक परिचालनगत स्वायत्तता है, किंतु कतिपय विधिक प्रावधानों में संशोधन, तथा आरबीआई अधिनियम*

* उर्जित आर.पटेल, भारतीय रिज़र्व बैंक, उद्घाटन भाषण: सेंटर फॉर लॉ एंड इकॉनोमिक्स, सेंटर फॉर बैंकिंग एंड फाइनैन्शियल लॉज़ गुजरात नेशनल यूनिवर्सिटी, गांधीनगर 14 मार्च 2018

में आरबीआई की स्वतंत्रता को औपचारिक आधार देने से अधिक विधिक निश्चितता आएगी। पीएसबी का पर्यवेक्षण और विनियमन करने की आरबीआई की शक्तियां भी बाधित/निरुद्ध हैं- यह पीएसबी के निदेशकों या प्रबंधन, जिन्हें भारत सरकार (जीओआई) ने नियुक्त किया है, को हटा नहीं सकता है, न ही वह किसी पीएसबी के बलात् विलयन अथवा परिसमापन की शुरुआत कर सकता है; इसके (आरबीआई) पास पीएसबी बोर्ड को कार्यनीतिक निदेश, जोखिम प्रोफाइल, प्रबंधन का मूल्यांकन तथा क्षतिपूर्ति के संबंध में जवाबदेह बनाने के लिए भी सीमित विधिक प्राधिकार हैं। इस प्रकार, पीएसबी के लिए उन्हीं जिम्मेदारियों का प्रयोग करने के लिए, जो अभी निजी बैंकों पर लागू हैं, तथा पर्यवेक्षी प्रवर्तन के लिए समान अवसर क्षेत्र सुनिश्चित करने के लिए आरबीआई को सशक्त करने के लिए विधिक सुधार किया जाना अत्यंत वांछनीय है।

2. विनिर्दिष्ट रूप से, कॉर्पोरेट गवर्नेंस पर (सीपी 14, पैरा 50, पृष्ठ 18) : निजी और विदेशी बैंकों के संबंध में स्वस्थता और उपयुक्तता पर उचित नियम, तथा आंतरिक शासन संरचनाएं बनाई गई हैं। इसके बावजूद, बीआर अधिनियम की धारा 21 बैंकों के बोर्ड में आरबीआई के प्रतिनिधियों की नियुक्ति, तथा बैंकिंग अधिनियमों के तहत आरबीआई के अत्यंत सीमित प्राधिकार के द्वारा बैंकों के अभिशासन में आरबीआई जिस प्रभाव का प्रयोग कर सकता है, और साथ ही, पीएसबी बोर्ड को जवाबदेह ठहराने की नीति एक समस्या बन गई है। *विधि के अधीन तथा रीति के अनुसार आरबीआई पीएसबी बोर्डों को मूल्यांकन के लिए उत्तरदायी नहीं ठहरा सकता है तथा - जब आवश्यक हो - कमजोर तथा गैर- निष्पादक वरिष्ठ प्रबंध तंत्र और सरकार द्वारा नियुक्त बोर्ड के सदस्यों को बदल नहीं सकता है।*[1]

अब मैं अपनी बात विस्तार से बताता हूं।

भारत में बैंकिंग विनियामकीय शक्तियां स्वामित्व से तटस्थ नहीं हैं

भारत में सभी वाणिज्यिक बैंकों का विनियमन भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा बैंककारी विनियमन (बीआर) अधिनियम, 1949 के अधीन किया जाता है। इसके अलावा, सभी सरकारी क्षेत्र के बैंकों का विनियमन बैंकिंग कंपनी (उपक्रमों का अधिग्रहण और अंतरण) अधिनियम, 1970; बैंक राष्ट्रीयकरण अधिनियम, 1980 तथा भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम, 1955 के अधीन भारत सरकार द्वारा किया जाता है। संशोधित बीआर अधिनियम की धारा 51 में यह सुस्पष्ट रूप से कहा गया है कि बीआर अधिनियम के कौन से खंड पीएसबी पर लागू होते हैं, उन सभी छूटों में सबसे समान धागा है पीएसबी के कॉर्पोरेट गवर्नेंस में आरबीआई की शक्तियों को पूरी तरह हटा देना या क्षीण कर देना:

1. आरबीआई पीएसबी के निदेशकों और प्रबंधन को हटा नहीं सकता, क्योंकि बीआर अधिनियम की धारा 36 एए (1) पीएसबी पर लागू नहीं है।
2. बीआर अधिनियम की धारा 36 एसीए (1), जिसमें किसी बैंक के बोर्ड के अधिक्रमण का प्रावधान है, भी पीएसबी (तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक या आरआरबी) के मामले में लागू नहीं होती है, क्योंकि वे कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत कंपनियां नहीं हैं।
3. बीआर अधिनियम की धारा 10बी (6), जिसमें किसी बैंकिंग कंपनी के चेयरमैन और प्रबंध निदेशक (एमडी) को हटाने का प्रावधान है, भी पीएसबी के मामले में लागू नहीं है।[2]
4. बीआर अधिनियम की धारा 45 के अनुसार आरबीआई पीएसबी के मामले में विलयन के लिए विवश नहीं कर सकता है।
5. पीएसबी को बैंकिंग कार्यकलापों के लिए बीआर अधिनियम की धारा 21 के अंतर्गत आरबीआई से लाइसेंस लेना अपेक्षित नहीं है; इसलिए आरबीआई बीआर अधिनियम की धारा 22 (4) के अधीन लाइसेंस रद्द नहीं कर सकता है, जैसा कि वह निजी बैंकों के मामले में कर सकता है।

[1] यहां यह नोट किया जाए कि एफएसएपी में अन्य विनियम, लेखांकन और प्रकटीकरण (सीपी 20, 26- 29, पैरा62, पृष्ठ 21) का यह उल्लेख किया गया है: वर्तमान में बाह्य लेखापरीक्षक का यह दायित्व नहीं है कि वह लेखा-परीक्षित बैंक में पाए गए ऐसे मुद्दों को आरबीआई विनियामक को तत्काल रिपोर्ट करे जो पर्यवेक्षक के लिए महत्वपूर्ण चिंता के विषय हों। वार्षिक विवरणों के प्रकाशन के बाद ही इसकी अनुमति दी जाती है। साथ ही, विनियामक के लिए आवश्यक है कि उसे जब भी आवश्यकता हो, लेखापरीक्षक के कामकाज से जुड़े दस्तावेज तक पहुंच की शक्तियां उसके पास हों। विधि तथा/ अथवा विनियमों में बाह्य लेखापरीक्षकों को किसी भी समय; वार्षिक विवरणों को अंतिम रूप दिए जाने और प्रकाशित करने से पहले भी किसी भी चिंता के बारे में आरबीआई को सूचित करने के लिए सुस्पष्ट रूप से प्राधिकृत किया जाना चाहिए। आरबीआई को बाह्य लेखापरीक्षक से किसी भी समय कोई भी सूचना प्राप्त करने का सुस्पष्ट प्राधिकार दिया जाना चाहिए। तथापि, यह मुद्दा सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों के बैंकों के लिए लागू होता है।

[2] आईडीबीआई बैंक लि. इसका अपवाद है, जिसके लिए संस्था के अंतर्नियमों (खण्ड 120) में आरबीआई को अपेक्षित प्राधिकार दिया गया है।

6. बीआर अधिनियम की धारा 39 के अनुसार आरबीआई पीएसबी के परिसमापन की शुरुआत नहीं कर सकता है।

7. इसके अतिरिक्त, एक विचित्र अपवाद यह भी है कि कुछ मामलों में प्रबंध निदेशक और चेयरमैन केवल नाम के ही दो व्यक्ति होते हैं - वास्तव में वे एक ही हैं - जिसका आशय यह है कि एमडी मूल रूप से केवल स्वयं के प्रति ही जवाबदेह है।

इस विधायी वास्तविकता के कारण बैंकिंग विनियमन क्षेत्र के परिदृश्य में एक गहरी दरार उत्पन्न हो गई है : एक दोहरे विनियमन की प्रणाली जहाँ आरबीआई के साथ-साथ वित्त मंत्रालय भी विनियामक होता है।[3] अब मैं चंद मिनटों में आपके समक्ष यह स्पष्ट करने का प्रयास करूंगा कि जब तक इस प्रकार की दरार या प्रणालीगत दोष विद्यमान है तब तक उसी प्रकार के भूचाल आते रहेंगे जैसा कि अभी हाल ही में आया था।

बैंकों में (या निगमों में), चाहे सरकारी क्षेत्र के हों या निजी क्षेत्र के, कर्मचारी या कर्मचारियों के समक्ष धोखाधड़ी में लिप्त हो जाने के प्रलोभन हमेशा मौजूद रहते हैं। अब प्रश्न यह है कि क्या पर्याप्त भयोत्पादक उपाय किए गए हैं ताकि कर्मचारी धोखाधड़ी करने से डरें अथवा क्या प्रबंध तंत्र को इस बात के लिए समुचित प्रोत्साहन प्रदान किया जाता है कि वह धोखाधड़ी को रोकने हेतु निरोधात्मक उपाय करे। बैंकों के मामले में तीन संभाव्य सशक्त तंत्र धोखाधड़ियों के विरुद्ध अनुशासन ला सकते हैं:-

1. **जाँचपरक / सतर्कतामूलक / विधिक भय :** यदि धोखाधड़ी की घटनाओं की रिपोर्टिंग और जांच शीघ्र की जाए और इन मामलों में लगाये जाने वाले जुर्माने की रकम इस प्रकार की फर्जी गतिविधियों से हुए लाभ की तुलना में काफी अधिक हो, तो धोखाधड़ी की आपराधिक जांच और दंड के प्रावधान प्रभावी भयोत्पादक उपाय हो सकते हैं।

2. **बाजार अनुशासन:** धोखाधड़ी की गतिविधि से आधार रेखा को निवल हानि हो सकती है; ऐसे मामले में बैंक के निवेशकर्ता निवारक बन सकते हैं; उदाहरणार्थ अबीमाकृत ऋणदाताओं में बैंक से अपना पैसा वापस लेने की होड़ मच जाए और बैंक में चलनिधि संबंधी समस्याएं खड़ी हो जाएं; अथवा शेयरधारक बाहर का रुख कर लें जिससे पूंजी की लागत बढ़ जाए और शोधन क्षमता पर प्रश्नचिह्न लग जाए। ऐसे विघटनकारी परिणामों, जिनसे स्थितियाँ नियंत्रण से बाहर हो जाएं, का पूर्वानुमान करते हुए प्रबंध तंत्र और बोर्ड के सदस्यों को चाहिए कि वे ऐसा अभिशासन तंत्र बनाएं जिससे धोखाधड़ी की गतिविधियों को रोका या कम किया जा सके या पूंजीगत संरचना में इतना बफर रखें ताकि जब धोखाधड़ी हो तो हानि वहन की जा सके।

3. **विनियामकीय अनुशासन :** दुनिया के ज्यादातर हिस्सों में बैंकों के पास जमानिधियों का एक बड़ा हिस्सा बीमाकृत होता है, और चूंकि बैंक भुगतान और निपटान का अति महत्वपूर्ण कार्य करते हैं, अत: वे प्राय: इतने बड़े होते हैं अथवा उनकी संख्या इतनी अधिक होती है कि उनका फेल हो जाना लगभग असंभव होता है। ऐसे में वित्तीय स्थिरता के साथ समझौता किए जाने के संदर्भ में बाजार अनुशासन कहीं न कहीं कमजोर पड़ जाता है जिसकी भरपायी एक बैंकिंग विनियामक संस्था का गठन करते हुए उसे पर्यवेक्षी और विनियामकीय शक्तियां देकर की जाती है। ऐसे में, विनियामक द्वारा पहचान और दण्ड प्रभावी होना चाहिए ताकि धोखाधड़ी पर अंकुश लगाया जा सके।

भारत के निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के मामले में ये तंत्र किस प्रकार काम करते हैं?

हमारे देश में जांच और औपचारिक प्रवर्तन प्रक्रिया में काफी अधिक समय लगता है, और संभवतः इसके उचित कारण भी मौजूद हैं। वास्तव में बैंकिंग धोखाधड़ी के संबंध में आरबीआई के पास मौजूद आंकड़ों से यह पता चलता है कि पिछले पांच वर्षों के दौरान केवल कुछ ही मामलों को निपटाया जा सका है और आर्थिक रूप से बड़े मामले अभी भी चल रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप समग्र प्रवर्तन तंत्र फिलहाल धोखाधड़ी से प्राप्त लाभों की तुलना में धोखाधड़ी निवारक नहीं समझा जाता है।

यह कहना सही है कि निजी क्षेत्र के बैंकों के मामले में वास्तविक भय बाजार, विनियामकीय अनुशासन और उनके सम्मिलित प्रभाव से उत्पन्न होता है। किसी भी निजी क्षेत्र के बैंक के सीईओ की मूल चिंता इस बात को लेकर होती है कि क्या वह आवश्यकता पड़ने पर पूंजी जुटा सकेगा; अथवा यह कि क्या वह अगले दिन बैंक चला सकेगा। कहने का मतलब यह है कि उन्हें उनके बोर्ड के माध्यम से चेतावनी दी जा सकती है अथवा बड़ी या बार-बार अनियमितताएं होने पर आरबीआई द्वारा उन्हें बदला भी जा सकता है। इसके अलावा, यदि कोई निजी बैंक शोधन क्षमता मानकों को पूरा करने में असफल हो और आरबीआई के "त्वरित सुधारात्मक मानकों" (पीसीए) के तहत उसके लिए पूंजी

[3] निस्संदेह, सरकारी बैंक होने के कुछ अन्य (सुप्रलेखित) जटिलताएं हैं: बोर्ड का गठन, जिसमें किसी निदेशक को स्वतंत्र के रूप में वर्गीकृत करना कठिन है; निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में पारिक्षमिक में बहुत बड़े अंतर, जिससे विशेषज्ञ निपुणता का ह्रास हो रहा है; केंद्रीय सतर्कता आयोग (सीवीसी) तथा केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई)के माध्यम से बाह्य सतर्कता का प्रवर्तन; तथा सूचना का अधिकार (आरटीआई) अधिनियम की सीमित प्रयोज्यता।

जुटाना कठिन हो जिसके चलते उसके लिए तत्काल नोटिस पर हालात पर काबू पाना आवश्यक हो जाए ताकि वह बाजार से वित्त प्राप्त करते हुए संवृद्धि के पथ पर आगे बढ़ सके। उलटे, उनके यहां अभिशासन में निवेश को प्रोत्साहित किया जाता है ताकि धोखाधड़ी और विनियामकीय उल्लंघनों की घटनाओं को सीमित किया जा सके और जब इस प्रकार की घटनाएं हों, तो उनसे तत्परता से निपटा जा सके।

इसके विपरीत, निजी बैंकों की तुलना में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के लिए बाजार अनुशासन तंत्र बेहद कमजोर है। पीएसबी के सभी लेनदारों को सरकार द्वारा अपेक्षाकृत अधिक मजबूत गारंटी मिलती है और सरकार - जो इन बैंकों की प्रमुख शेयरधारक है - ने अब तक इनकी स्वामित्व संरचना में कोई मूलभूत बदलाव लाने में रुचि नहीं दिखाई है। आर्थिक दृष्टिकोण से, इस कमजोर बाजार अनुशासन का निहितार्थ यह भी है कि सरकार इन बैंकों पर कठोर विनियामकीय अनुशासन बनाए रखना चाहेगी न कि कमजोर। तथापि, जैसा कि मैंने ऊपर विस्तार से बताया है और चूंकि बैंकों के राष्ट्रीयकरण के पीछे मूल विचार अर्थव्यवस्था के लिए ऋण आबंटन पर पूरा सरकारी नियंत्रण रखना था, भारत में स्थिति बिलकुल उलटी है : सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों पर भारतीय रिज़र्व बैंक की विनियामक शक्तियां निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में काफी कमजोर हैं।

बैंककारी विनियमन अधिनियम में पीएसबी को दी गयी छूटों का मतलब है कि बैंकिंग धोखाधड़ी या अनियमितताओं के विरुद्ध अपेक्षाकृत अधिक तत्परता से कार्रवाई करने वाली एकमात्र एजेंसी - विनियामक - प्रभावी तरीके से कार्रवाई नहीं कर सकती। इसलिए, उदाहरण के तौर पर, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के प्रबंध निदेशक बड़ी आसानी से मीडिया में जाकर यह कहते हैं कि आरबीआई के त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई ढ़ाँचे के अंतर्गत उनका कारोबार सामान्य रूप से चलता रहेगा, भले ही वे ढ़ांचे में निर्धारित प्रतिबंधों का पालन न कर रहे हों, तो भी अगले दिन उनका कारोबार सामान्य तरीके से चलता रहेगा क्योंकि उनका कार्यकाल तय करने का अंतिम अधिकार सरकार के पास है, आरबीआई के पास नहीं।

इसमें बहुत आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि देश में वित्तीय क्षेत्र सुधारों पर तैयार की गयी एक के बाद एक रिपोर्टों में शीर्ष प्रबंध-तंत्र और बोर्ड के सदस्यों की नियुक्तियों में सुधार करते हुए; अथवा बैंकिंग विनियामकीय शक्तियों को स्वामित्व-निरपेक्ष बनाते हुए; अथवा विभिन्न प्रकार की स्वामित्व संरचनाओं पर विचार-विमर्श करके बाजार अनुशासन में सुधार करते हुए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के गवर्नेंस को सुदृढ़ करने के सुझाव दिए गए हैं।

क्या हम पीएसबी में मूलभूत सुधारों की प्रक्रिया को तेज करने का एक और अवसर खो देना चाहते हैं ?

इस दिशा में क्या किया जाना चाहिए- यह बिलकुल स्पष्ट है। आरबीआई के नज़रिये से, कम से कम इतना किया जाना आवश्यक है कि बीआर अधिनियम में ऐसे विधायी परिवर्तन किए जाएं जिनसे हमारी बैंकिंग विनियामक शक्तियां स्वामित्व-निरपेक्ष हो सकें - आंशिक रूप से नहीं, पूरी तरह। उपलब्ध विकल्पों में से फिलहाल यही संभवत: सबसे व्यवहार्य भी है।[4]

कोई भी बैंकिंग विनियामक समस्त धोखाधड़ी को न तो पूरी तरह पकड़ सकता है, न ही रोक सकता है

इससे पहले कि मैं बैंक की दबावग्रस्त आस्तियों एवं उनके समाधान जैसे व्यापक मुद्दों पर बात करूं यह भी एक प्रासंगिक मुद्दा है। धोखाधड़ी की घटना के बाद आमतौर पर यह कहने की प्रवृत्ति रही है कि भारतीय रिज़र्व बैंक के पर्यवेक्षी दल को इसे पकड़ना चाहिए था। हालांकि यह बात किसी भी धोखाधड़ी के घटने के बाद सदैव कही जा सकती है, तथापि, किसी भी बैंकिंग विनियामक के लिए सामान्यतया नामुमकिन होगा कि वह बैंकिंग गतिविधियों के प्रत्येक कोने तक पहुंच सके और "अपनी मौजूदगी" से धोखाधड़ी की संभावनाओं को समाप्त कर दे। यदि कोई विनियामक इस प्रकार का सटीक परिणाम हासिल कर पाता है, तो इसका यह मतलब होगा कि विनियामक हर वह कार्य कर सकता है जो बैंक कर सकते हैं, और इसका प्रभाव यह होगा कि वह समस्त बैंकिंग गतिविधियों में स्वयं मध्यस्थता कर सकेगा। यहां आवश्यकता इस बात की है कि धोखाधड़ी एवं अन्य अनियमितताओं का निवारण करने वाले विभिन्न तंत्र बनाए जाएं, जो प्रभावपूर्ण हों ताकि धोखाधड़ी की घटनाएं कम हों और उनका प्रभाव नियंत्रित रहे। वस्तुत:, बैंकों में होने वाली धोखाधड़ी की घटनाएं विभिन्न बैंकिंग विनियामकीय गुणवत्ता स्तरों वाले विभिन्न कालों में सरकारी एवं निजी, दोनों क्षेत्रों के बैंकों में घटित हुई हैं।

इस समय घटित विशिष्ट मामले में रिज़र्व बैंक ने साइबर जोखिम दृष्टिकोण के आधार पर परिचालनगत खतरे के सही स्रोत का पता लगाया था - जिससे अब यह

[4] बैंकिंग विनियामक शक्तियों की द्विविधिता सहकारी बैंकों के मामले में भी देखने को मिलती है जहाँ पर भारतीय रिज़र्व बैंक को संघर्ष करना पड़ता है क्योंकि बहुत सी शक्तियां इसकी हाथों से लेकर राज्य सरकारों को दे दी गयी हैं। सहकारी बैंकों की यह विशेषता होती है कि वे आकार में छोटे होते हैं और उनके फेल होने पर उत्पन्न स्थिति से निपटने के लिए निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम द्वारा उनके परिसमापन की कार्रवाई की जाती है जिसमें उनके कुछ जमाकर्ताओं का हित सुनिश्चित किया जाता है। ऋण संस्कृति में सुधार करने और धोखाधड़ीपूर्ण कर्ज की घटनाओं में कमी लाने के उद्देश्य से बैंकिंग क्षेत्र में किए जाने वाले व्यापक सुधारों के एक भाग के रूप में मानते हुए इस द्विविधता की स्थिति को दूर किया जाना आवश्यक है।

समझ में आ रहा है कि इस प्रकार की धोखाधड़ी की जाती रही है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने 2016 में तीन परिपत्रों के माध्यम से खास तौर से स्पष्ट अनुदेश जारी किए थे ताकि बैंक इस तरह के खतरे को खत्म कर सकें। बाद में यह पता चला कि बैंकों ने इन अनुदेशों का पालन किया ही नहीं था। स्पष्ट है कि बैंक की आंतरिक प्रक्रियाएं नाकाम रहीं क्योंकि उन्होंने ऐसे परिचालनों को बंद करने के स्पष्ट अनुदेश होने के बावजूद परिचालनगत खतरों को बने रहने दिया। जैसा कि हमने इस मामले में आज तक भारिबैं. द्वारा दिए गए एकमात्र वक्तव्य में कहा था, वस्तुत: यह हमारे दूसरे सबसे बड़े सरकारी क्षेत्र के बैंक की परिचालनगत असफलता है। भारतीय रिज़र्व बैंक उसे दी गई शक्तियों के आधार पर बैंक के विरुद्ध कार्रवाई करेगा लेकिन सरकारी क्षेत्र के बैंकों के मामले में बैंककारी विनियमन अधिनियम के अंतर्गत ये शक्तियां बहुत ही सीमित हैं।

वस्तुत:, हाल ही में 11 मार्च 2018 को प्रेस ट्रस्ट आफ इंडिया को दिए गए अपने साक्षात्कार में आईएमएफ के उप प्रबंध निदेशक तावो ज़ेंग ने ऊपर मैंने जो अन्य बातें कही हैं, उनका समर्थन करते हुए निम्नलिखित बिंदु पर ज़ोर दिया है:

हमारा मानना है कि सरकारी क्षेत्र के बैंकों का पुन: पूंजीकरण, वित्तीय सुधार के एक वृहत पैकेज का हिस्सा होना चाहिए ताकि एनपीए का समाधान निकाला जा सके, सरकारी क्षेत्र के बैंकों में गवर्नेंस को बेहतर बनाया जा सके, वित्तीय प्रणाली में सरकारी क्षेत्र की भूमिका को कम किया जा सके, और बैंकों की उधार देने की क्षमता और ऐसी प्रथाओं को बढ़ावा दिया जा सके...। विशेषज्ञों ने विधिक बदलावों की सिफारिश की है ताकि इस समय भारतीय रिज़र्व बैंक जिन शक्तियों का इस्तेमाल निजी क्षेत्र के बैंकों के लिए करता है, उन्हीं शक्तियों का उपयोग सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए कर सके; खासतौर से बोर्ड के सदस्यों को बर्खास्त करना, विलय एवं लाइसेंस को निरस्त करना....। इसके साथ ही, बैंक का परिचालनगत जोखिम प्रबंधन, जोखिम संस्कृति, आंतरिक नियंत्रण संरचना तथा बाह्य लेखापरीक्षा जैसे कार्य धोखाधड़ी को रोकने में विशेष रूप से केंद्रीय भूमिका अदा करते हैं।

दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान जैसे बड़े मुद्दों पर पुन: ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता

अब मैं ऐसे मुद्दे पर बात करूंगा जो हाल की बैंकिंग धोखाधड़ी के मुद्दे से कहीं ज्यादा गंभीर एवं महत्वपूर्ण हैं। इसकी गंभीरता इतनी है कि बैंकों के तुलनपत्रों में 8½ लाख करोड़ रुपए से कहीं अधिक की आस्तियां दबावग्रस्त हैं और इसका महत्व प्रवर्तक-बैंक क्रेडिट संबंधों में अपनाई गई अनेक प्रथाओं से उपजा है जिस पर तत्काल ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है। भारतीय रिज़र्व बैंक की जून 2017 की वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट(भाग VII, धोखाधड़ी, पैरा 3.36) में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि बैंक धोखाधड़ी और दबावग्रस्त आस्तियों की समस्या के बीच कोई न कोई संबंध अवश्य है:

"वित्तीय क्षेत्र में जोखिम का जो परिदृश्य उभरता नज़र आ रहा है वह वाणिज्यिक बैंकों और वित्तीय संस्थाओं में धोखाधड़ी की बढ़ती प्रवृत्ति है। पिछले पांच वित्तीय वर्षों में धोखाधड़ी अत्यधिक बढ़ी है, उसकी संख्या तथा राशि दोनों में वृद्धि हुई है। इस अवधि में जहां धोखाधड़ी की संख्या में 19.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो 4235 से बढ़कर 5064 हो गई है, वहीं इसके मूल्य (हुई हानियां) में 72 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जो ₹97.5 बिलियन (₹9750 करोड़) से बढ़कर ₹167.7 बिलियन (₹16,770 करोड़) हो गई। वर्ष 2016-17 के दौरान रिपोर्ट की गई धोखाधड़ी में (राशि के हिसाब से) (ऋण) अर्थात् दिए गए अग्रिम के पोर्टफोलियो में धोखाधड़ी का हिस्सा सबसे अधिक 86 प्रतिशत था। .....बड़े मूल्य की अनेक धोखाधड़ियों के ऋण हामीदारी मानकों में गंभीर अंतर पाए गए हैं। प्राय: पाए गए कुछ अंतर इस प्रकार रहे हैं - प्रस्ताव के चरण पर प्रचुरता से नकदी प्रवाह का बताया जाना, नकदी प्रवाह तथा नकदी लाभ (ईबीआईटीडीए) पर निरंतर निगरानी न रख पाना, सही-सही ज़मानती व्यवस्था का अभाव एवं ज़रूरत से ज़्यादा मूल्यांकन दिखाना, परियोजनाओं को आकर्षक बनाकर पेश करना, धन को इधर से उधर लगाना, बैंको में दोहरा वित्तपोषण एवं सामान्य क्रेडिट गवर्नेंस संबंधी मामले।" इतना ही नहीं, कारपोरेट ऋण संबंधी जितने भी धोखाधड़ी के मामले पेश आए हैं उन सभी में धोखाधड़ी की सूचना मिलने के 2 से 3 वर्ष पहले ही वे एनपीए बन चुके थे।

कुल मिलकार इस नतीजे पर पहुंचा गया है कि भारत में उद्यमों को ऋण दिए जाने के चक्र के दौरान बार-बार बेशी ऋण प्रदान किए गए हैं, जो उनकी चुकौती की समस्या खड़ी हो जाने के बाद भी दिए गए हैं। दबावग्रस्त ऋण समस्या को तेजी से सुलझाने के बजाय बैंकों ने ऋण स्तर पर झूठे तथ्यों के माध्यम से अथवा क्रेडिट की सही-सही आस्ति गुणवत्ता को न मानकर - प्रवर्तकों को, जो उद्यमों के प्रभारी रहे हैं, रियायतें दी हैं। उधारों की इन रियायतों में और अधिक बैंक उधार देना भी शामिल है, ताकि ऋण की देय तारीख को खाते को कृत्रिम रूप से संपूर्ण चुकौती की स्थिति में दिखाया जा सके, जो यह दर्शाता है कि प्रवर्तकों का उनकी असफल आस्तियों पर कितना नियंत्रण है, तथा उन्हें इस बात की प्रभावी रूप से योग्यता प्रदान करना कि वे नकदी एवं आस्तियों को इधर से उधर लगा सकते हैं, प्राय: हमारे अधिकारक्षेत्र की पकड़ से बाहर हो गया है।

भारतीय रिज़र्व बैंक अपने मानदंडों के अनुसार आस्तियों को अनर्जक के रूप में पहचान कर पाने में

नाकामी पर लगाम लगाने के लिए बैंक से यह अपेक्षा करता रहा है कि वे जिनके "डाइवर्जेन्स" मानदंडों के अनुसार सही-सही अनर्जक आस्तियों के 15 प्रतिशत से अधिक हो गए हैं, वे ऐसे डाइवर्जन का खुलासा करें। इससे इस प्रकार की प्रथा के विरुद्ध बाज़ार में थोड़ा सा अनुशासन बहाल किया जा सकेगा, खासतौर से निजी क्षेत्र के बैंकों में। लेकिन अंतत: इस बात की आवश्यकता है कि आस्तियों में निहित दबाव के समयबद्ध समाधान के लिए एक ढांचा लागू होना चाहिए जो बैंकों द्वारा दबावग्रस्त आस्तियों की पहचान करने में विलंब करने, सदाबहार "ज़ाम्बी(अनुप्राणित)" दिखाने, अथवा मृत उधारकर्ता को जीवित दिखाने, और ऋणों का खराब आवंटन करने के स्वविवेक पर पाबंदी लगाएगा।

इस प्रयोजन से, मैं उन औचित्यों को यहां प्रस्तुत एवं स्पष्ट करना चाहता हूं जो भारतीय रिज़र्व बैंक के संशोधित ढांचे में दबावग्रस्त आस्तियों की तत्काल पहचान करने एवं उनका समाधान देने में निहित हैं। पिछले महीने जो ढांचा जारी किया गया है उसके महत्व को कुछ हद तक पसंद नहीं किया गया है। इसलिए मैं उसके बारे में बताना चाहता हूं।

दबावग्रस्त आस्तियों की तत्काल पहचान एवं उनका समाधान : संशोधित ढांचा

1. बैंककारी विनियमन(संशोधन) अधिनियम, 2017, और भारत सरकार द्वारा बाद में उसमें दिए गए प्राधिकार ने रिज़र्व बैंक को इस बात के लिए प्राधिकृत कर दिया है कि वह दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए बैंकों को निर्देश जारी कर सके, साथ ही ऐसी आस्तियों को दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता 2016(आईबीसी) को संदर्भित कर सके। रिज़र्व बैंक ने इस दिशा में पिछले वर्ष ही कदम उठा लिया था, जिसमें इस बात पर ध्यान केंद्रित किया गया था कि कतिपय बड़े मूल्य की दबावग्रस्त आस्तियों के खातों को आईबीसी को संदर्भित किया जाए, जिसमें बैंकिंग क्षेत्र की दबावग्रस्त आस्तियों में बैंकिंग क्षेत्र का कुल एक्सपोजर लगभग 40% था।

2. दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के संबंध में रिज़र्व बैंक द्वारा 12 फरवरी 2018 को जारी किया गया संशोधित ढांचा एक प्रकार से इन दबावग्रस्त आस्तियों को स्वाभाविक रूप से समाप्त करने का प्रारंभिक कदम एवं सतत दृष्टिकोण था। इस सतत-दृष्टिकोण का उद्देश्य यह था कि दबावग्रस्त आस्तियों का पारदर्शी तथा समयबद्ध तरीके से समाधान सुनिश्चित किया जाए ताकि उधारदाताओं को उनका अधिकतम मूल्य वापस मिल सके और साथ ही इस बात का निर्धारण करना कि दबावग्रस्त आस्तियों के भारी मूल्य के प्रति सरोकार निरंतर बना रहे। जैसाकि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है, यह दृष्टिकोण अर्थव्यवस्था में ऋण देने की प्रथा को उधारकर्ता एवं बैंकों दोनों के स्तर पर सुदृढ़ बनाने के लिए उठाया गया सकारात्मक कदम है।

3. भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान के लिए आईबीसी-पूर्व जो विभिन्न प्रकार की विशेष योजनाएं शुरू की गई थीं, उनमें समाधान प्रक्रिया को उधारदाता के आस्ति-वर्गीकरण द्वारा चालित बना दिया गया था। विशेष रूप से, इन योजनाओं में निहित नरम रुख ने बैंकों के लिए आस्तियों का समाधान करना आसान बना दिया था, किंतु वे स्वत: समाप्त साबित हुईं और इन योजनाओं को लागू करने से अल्पमात्र समाधान ही किया जा सका।

4. इस संशोधित ढांचे ने आईबीसी-पूर्व की योजनाओं की जगह ले ली है और इनमें व्याप्त नरमी को समाप्त कर दिया गया है क्योंकि इससे समाधान में विलंब होता था। बल्कि इस ढांचे का आधार देश में कई दशकों में क्रेडिट-प्रणाली की दिशा में किया गया बड़ा संरचनात्मक सुधार है, अर्थात् आईबीसी, जो समाधान का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। आईबीसी को अपनी धुरी की तरह इस्तेमाल करते हुए इस ढांचे का वास्तविक उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि दबावग्रस्त आस्तियों के संबंध में समाधान योजना में प्राथमिक रूप से वस्तुत: आस्तियों की व्यवहार्यता पर ध्यान दिया जाए।

5. इस बात पर ज़ोर देना होगा कि संशोधित ढांचे में उधारदाता को पूरी तरह से यह आज़ादी प्राप्त होगी कि वह एक फायदेमंद समाधान योजना प्रस्तुत कर सके, जैसाकि आईबीसी-पूर्व योजनाओं में प्राप्त थी, किंतु उन्हें लागू करने की कुछ शर्तों को पूरा करना होगा (ये शर्तें इसलिए ज़रूरी होंगी ताकि अव्यवहार्य आस्तियों को सदाबहार दिखाते रहने के सरोकार से छुटकारा पाया जा सके)।

6. खासतौर से, उन खातों के बारे में जिनका सकल एक्सपोजर 2000 करोड़ रुपए से अधिक है, के समाधान की योजना को उनमें चूक की तारीख से 180 दिन के भीतर लागू करना आवश्यक होगा, अन्यथा उसे आईबीसी को संदर्भित कर दिया जाएगा। इस समय सीमा को दो वर्षों में धीरे-धीरे कम किया जाएगा ताकि आईबीसी अपने इंफ्रास्ट्रक्चर को समानांतर रूप

से स्थापित कर सके जिससे उसमें अधिक मामलों पर विचार करने की क्षमता पैदा हो सके। यहां यह बताना आवश्यक है कि आईबीसी स्वयं में एक समाधान ढांचा है, जहां इस प्रकार के खातों का कारगर समाधान करने के लिए पर्याप्त समय (चूक की तारीख से 180 दिन तथा आईबीसी के अधीन और 270 दिन) होगा।

7. यहां इस बात को भी रेखांकित किया जाता है कि संशोधित ढांचे के अंतर्गत:

ए. स्वामित्व में बदलाव का समर्थन आईबीसी को संदर्भित करने से पूर्व भी किया जाता रहा है क्योंकि इससे आस्ति को मानक के रूप में (जैसाकि पूर्व की योजनाओं में किया जाता था) वर्गीकृत किया जा सकता है। चूककर्ता प्रवर्तकों को भी आईबीसी बिडिंग के अंतर्गत फर्म पर कम जोखिम का नियंत्रण प्राप्त हो सकेगा। इस प्रकार इस संशोधित ढांचे से उधारकर्ता को यह प्रोत्साहन प्राप्त होगा कि वह जरूरत से ज्यादा उधार न ले, बल्कि विभिन्न प्रकार के ऐसे कारोबारी जोखिमों को नियंत्रित करने का उपाय करे जिनसे चूक करने की संभावना पैदा होती है।

बी. इसके अंतर्गत उधारदाता को भी अधिक प्रोत्साहन मिलेगा कि वह एक कुशल योजना को लागू कर पाएगा जिससे पुनर्रचना की स्थिति में उसे तेजी से अपग्रेड कर सकेगा। इसके अतिरिक्त, एनपीए के रूप में वर्गीकृत आस्तियों के लिए कोई रियायत नहीं होगी, इसलिए इस ढांचे से बैंकों को यह प्रोत्साहन मिलेगा कि वे दबावग्रस्त आस्तियों की शीघ्र पहचान और समय पर कार्रवाई करके आस्तियों को एनपीए बन जाने की स्थिति को कम कर सकेंगे, संभवत: उधारकर्ता के वित्तीय कठिनाई में फंस जाने से भी पहले।

दूसरे शब्दों में, भारतीय रिज़र्व बैंक के संशोधित ढांचे एवं आईबीसी मिलकर प्रवर्तक-बैंक की मिलीभगत को तोड़ सकेंगे जिससे अंतरंग पूंजीवाद को बढ़ावा मिलता है तथा एनपीए/क्रेडिट के गलत आबंटन पर निगाह रखी जा सकेगी जो पूर्व ढांचे के अंतर्गत कुछ उधारकर्ताओं एवं कुछ उधारदाताओं के लिए हमेशा फायदेमंद रहती थी। इसके बदले में, प्रेत के समान उभरती फर्मों एवं क्षेत्रों से संवृद्धि को होने वाले नुकसान से बचाया जा सकेगा।

8. अंतिम बात यह है कि इस संशोधित ढांचे में विनिर्दिष्ट रूप से ऐसी एमएसएमई के पुनरुत्थान, एवं पुनर्वास को अलग रखा गया है जिनका एक्सपोजर ₹25 करोड़ तक है, जिन्हें पूर्व मानदंडों के अंतर्गत कवर किया जाना जारी रहेगा।

हमारा विश्वास है कि यह निश्चित रूप से ऐसा मूलभूत सुधार है जिसकी आवश्यकता क्रेडिट-संस्कृति को उसके मूल स्थान, चूक के स्थान, आस्ति गुणवत्ता तथा समाधान के चरणों पर सुदृढ़ बनाया जा सकेगा। ऐसा करने से, सबसे पहले ऋण देने से संबंधित धोखाधड़ी करने वाले अवसरों को कमज़ोर किया जा सकेगा।

अब मैं **अंतिम बात** रखना चाहता हूं:

आज मैं यह संदेश देना चाहता हूं कि बैंकिंग क्षेत्र में जो धोखाधड़ी हुई है और जो अनियमितताएं पाई गई हैं उनको लेकर रिज़र्व बैंक में भी गुस्सा है, हम आहत हुए हैं और हमें भी दर्द का अहसास है। सामान्य भाषा में कहें तो इस तरह की परंपराएं कुछेक कारोबारी समुदाय द्वारा हमारे देश के भविष्य को लूटने जैसी हैं, जिसमें कुछ उधारदाताओं की भी मिलीभगत है। बैंकों में आपकी जमाराशियों की सुरक्षा के रूप में रिज़र्व बैंक द्वारा 2015 में घोषित बैंकों की आस्ति गुणवत्ता समीक्षा की शुरुआत की गई, जिसे हमारे पर्यवेक्षी दलों ने सुयोग्य रीति से संचालित किया है, और जिसे बहुपक्षीय प्रतिष्ठित एजेंसियों के विशेषज्ञों द्वारा निष्पक्ष रूप से स्वीकार किया गया है, हम सभी इस प्रकार की नापाक साठ-गांठ को तोड़ने के लिए हर संभव प्रयास कर रहे हैं।

मैं उन उपायों की ओर देख रहा हूं जिन्हें हमने देश के क्रेडिट-कल्चर को साफ-सुथरा बनाने के लिए किए हैं- खासतौर से रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों में एनपीए के तत्काल निर्धारण एवं उनके समाधान के लिए 12 फरवरी को घोषित व्यापक विनियामकीय ओवरहाल की ओर- ये उपाय मौजूदा दौर में भारतीय अर्थव्यवस्था में *अमृत-मंथन* अथवा *समुद्र-मंथन* की प्रक्रिया में *मंदार पर्वत* अथवा मथनी के समान हैं। जब तक कि यह मंथन कार्य पूरा नहीं हो जाता तथा देश के भविष्य के लिए स्थिरता क़ायम रखने के लिए अमृत हासिल नहीं कर लिया जाता तब तक इस मंथन से उत्पन्न विष को किसी न किसी को तो पीना ही पड़ेगा। यदि हमें इन अड़चनों का सामना करना पड़े तथा इस विष को पीकर *नीलकंठ* बनना पड़े, तो भी हम हमारा कर्तव्य निभाएंगे; हम अपने प्रयासों में कामयाब होंगे और इस परीक्षण एवं विपत्ति की इस घड़ी में हर क़दम पर बेहतर सिद्ध होंगे।

मेरा विश्वास है कि अधिक से अधिक प्रवर्तक एवं बैंक- व्यक्तिगत रूप से अथवा सामूहिक रूप से अपने उद्योग की निकायों के साथ इस *अमृत-मंथन* में *असुरों* का साथ देने के बजाय *देवताओं* का साथ देने पर विचार करेंगे।

हमारे सरकारी क्षेत्र के बैंकों की स्वामी सरकार है - जिसने आईबीसी प्रदान किया है, संबंधित अध्यादेश दिए हैं तथा बैंक के पुन:पूंजीकरण का पैकेज दिया है ताकि यह मंथन निरंतर जारी रहे, शायद सरकार आगे भी इसी प्रकार से महत्वपूर्ण योगदान देना निम्नानुसार जारी रखेगी-

1. बैंकिंग विनियामक शक्तियों को बैंक के स्वामित्व से पृथक रखकर तथा सरकारी क्षेत्र के बैंकों एवं निजी क्षेत्र के बैंकों के बीच कार्यक्षेत्र को समान स्तर पर बनाकर।
2. स्वयं को इस बात से अवगत रखकर कि आगे चलकर दुर्लभ राष्ट्रीय राजकोषीय संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग करके उसका इष्टतम इस्तेमाल करते हुए सरकारी क्षेत्र की बैंकिंग प्रणाली के साथ क्या किया जाना चाहिए।

यह एक खुला मुद्दा है कि बैंकिंग मताधिकार, जिसका बैंकिंग जमाराशियों तथा आस्तियों में 2/3 हिस्सा है, की डिजाइनिंग एवं कार्यान्वयन पर क्या केवल केंद्रीकृत सरकारी नियंत्रण ही पर्याप्त रूप से प्रभावी हो सकता है। बल्कि यह बेहतर होगा कि विनियामकीय एवं बाज़ार का अनुशासन बहाल रखा जाए।

बैंकिंग क्षेत्र में किए जाने वाले इन सुधारों के साथ-साथ अन्य संरचनागत सुधारों के माध्यम से भारत सतत रूप से एवं सम्मानित तरीके से उन्नति कर सकेगा। धन्यवाद।